Original Research Paper

Volume : 5 | Issue : 11 | November 2016 • ISSN No 2277 - 8179 | IF : 3.508 | IC Value : 69.48

Social Science

KEYWORDS:

vkpk;l jfo"k.k ineiqjk.k esa lYys[kuk

ikQslj Mk- ch-,y- lsBh,

पीच.डी.,डी.लिट निदेशक त्रिलोक उच्चस्तरीय अध्ययन एवं अनुसंधान संस्थान जयपुर राजस्थान ।

"kks/kkFkh Jherh uhrq ;kno

राजनीति विज्ञान विभाग श्री जगदीशप्रसाद झाबरमल टिबड़ेवाला वि वविद्यालय, विद्यानगरी, चुड़ैला, झुन्झुनूं राजस्थान ।

सल्लेखना ले कर भोजन त्याग कोई दोष नहीं है, क्योंकि इसमें प्रमाद का अभाव है। 'प्रमत्त योग से प्राणों का वध करना हिंसा है' परन्तु इसके प्रमाद नहीं है, क्योंकि इसके रागादिक नहीं पाये जाते। राग, द्वेष और मोह से युक्त होकर जो विष और शस्त्र आदि उपकरणों का प्रयोग करके उनसे अपना घात करता है उसे आत्मघात का दोष प्राप्त होता है परन्तु सल्लेखना को प्राप्त हुए जीव के रागादि तो है नहीं इसलिए आत्मघात का दोष प्राप्त नहीं होता है।

सल्लेखना जबरदस्ती नहीं करायी जाती –

''न केवलमिह सेवनं परिगृह्यते।
कि तर्हि प्रीत्यर्थोऽपि
यस्मादसत्यां प्रीतौ बलान्न सल्लेखना कार्यते।
सत्यां हि प्रीतौ स्वयमेय करोति।।
यहां पर केवल '' सेवन करना'' अर्थ नही लिया गया है, क्योंकि प्रीती के न रहने पर स्वयं ही सल्लेखना करता है।

Hkkouk R;kx esa vkUrfjd d"kk;ksa dk R;kx Hkh vko';d

जो साधु कषायों को कृश न करके केवल शरीर को ही कृश करता है, उसका वह शरीर को कृश करना निष्फल है, क्योंकि कषायों को कृश करने के लिए ही शरीर को कृश किया जाता है, केवल शरीर को कृश करने के लिए नहीं।

lYys[kuk /kkj.k dh D;k vko';drk

भोजन त्याग करने या सल्लेखना धारण करना मरण को स्वीकार करना है। यद्यपि मरण किसी को इष्ट नहीं है, फिर भी परिस्थितिवश यदि व्यक्ति के विनाश के कारण उपस्थित हो जाएं और यथाशक्ति दूर करे पर भी दूर न हो त बवह अपने गुणों में बाधा न हो इसलिए सल्लेखना धारण करता है।

lYys[kuk ds vfrpkj

सल्लेखना के तत्त्वार्थ सूत्र में पाँच अतिचार बताये गऐ है :–
जीविताशंसा
मरणाशंसा
मित्रानुराग
सुखानुबन्ध
निदान

lYys[kuk dk egÙo ;k Qy

भगवती आराधना की मूल टीका, रत्न करण्ड श्रावचकाचार पदमपुराण पुरूषार्थ सिद्धध्युपाय, गन्थों में सल्लेखना का महत्व व फल अनेक रूपों में बताया गया हैं–

1. भोजन त्यागी स्वर्गो में अनुत्तर भोग भोगकर वहां से उत्तम मनुष्यभव में जन्म धारण कर सम्पूर्ण ऋद्धियों को प्राप्त करते है। पीछे वे जिनधर्म अर्थात् मुनिधर्म व तप आदि का पालन करते है।

2. शुक्ल लेश्या की प्राप्ति कर वे आराधक शुक्लध्यान से संसार का नाश करते है और कर्मरूपी कवच को फोड़ कर सम्पूर्ण क्लेशों का नाश कर मुक्त होते है।

3. पिया है धर्मरूपी अमृत जिसने ऐसा सल्लेखना धारी जीव समस्त प्रकार के दुःखों से रहित होता हुआ, अपार दुस्तर और उत्कृष्ट उदयवाले मोक्षरूपी सुख के समुद्र को पान करता है।

4. इस गृहस्थ धर्म का पालन कर जो समाधिपूर्वक मरण करता है, वह उत्तम देव पर्याय को प्राप्त होता है और वहां से च्युत होकर उत्तम मुनष्यत्व प्राप्त करता है।

5. क्योंकि इस सन्यास मरण में हिंसा के हेतुभूत कषाण क्षीणता को प्राप्त होते है, अतः इसको भी श्री गुरू अहिंसा की सिद्धि के लिए करते है।

{kid Hko/kkj.kk dh lhek

Hkxorh vkjk/kuk esa of.kZr gS & जो यति एक भव में समाधिमरण से मरण करता है वह अनेक भव धारण कर संसार में भ्रमण नहीं करता। उसको सात आठ भव धारण करने के पश्चात् अवश्य मोक्ष की प्राप्ति होगी।

eqykpkj xzFkk dk vuqlkj & बाल पंडित मरण से मरण करने वाला श्रावक, उत्कृष्टता से सात भव में नियम से सिद्ध होता है। चार प्रकार की इस (दर्शन, ज्ञान, चरित्र व तप) अराधना को उत्कृष्ट रूप में आराधता है, वह उसी भव में मुक्त होता है, जो मध्यमरूप से आराधता है वह तृतीय भव में मुक्त होता है, और जो जघन्य रूप से आराधता है वह सातवें भव में सिद्ध होता है। पदम् पुराण में उल्लेख है – जो गृहस्थधर्म का पालन कर समाधि पूर्वक मरण करता है, ऐसा जीव अधिक से अधिक आठ भवों में रत्नत्रय का पालनकर अन्त में निर्ग्रन्थ हो सिद्धपद को प्राप्त होता है।

/keZ ijh{kk dk Hkk"kkFkZ gS & जो सुधी पुरूष कषाय निदान और मिथ्यात्व रहित होकर सन्यासविधि के धारणपूर्वक मरण करते है, वे मनुष्य देवलोक में सुख को भोगकर 21 भव के भीतर मोक्षपद को प्राप्त करते है।

lYys[kuk esa lEHko ys';k,¡

शुक्ल लेश्या – उत्कृष्ट आराधक
पदम लेश्या – मध्यम आराधक
पीत लेश्या – जघन्य आराधक
सल्लेखना के लिए उपयुक्त काल

भगवती आराधना में वर्णन है– ''इस प्रकार से वर्षाकाल में नाना प्रकार के तपक र वह क्षपक जिसमें अनशनादि करने पर भी महान कष्ट का अनुभव नहीं आता, ऐसे हेमन्तकाल में संस्तर का आश्रय करता है।''

lYys[kuk ;ksX; 'kjhj] {ks= o dky

1. म्हाप्रयत्न से चिकित्सा करने योग्य ऐसा कोई दुरूत्तर रोग होने पर।
2. श्रामण्य की हानि करने वाली अतिशय वृद्धावस्था आने पर।
3. निःप्रतिकार देव, मनुष्य व तिर्यचकृत उपसर्ग आ पड़ने पर।
4. (लोभ आदि के वशीभूत हुए ऐसे) अनुकूल शत्रु जब चरित्र का नाश करने को उद्युक्त हो जाये।
5. भयंकर दुष्काल आ पड़ने पर।
6. हिंसक पुशओं से पूर्ण भयानक वन में दिशा भूल जाने पर।
7. आंख, कान व जंघा बल अत्यन्त क्षीण हो जाने पर मुक्ति या गृहस्थ भक्त शरीर त्याग योग्य समझे जाते है।

Øe iwoZd vkgkj o 'kjhj dk R;kx

1- 12 o"kZ dk dk;Øe

भक्त प्रत्याख्यान का उत्कृष्ट काल 12 वर्ष प्रमाण है। इन बारह वर्षो का कार्यक्रम निम्न प्रकार का है। प्रथम चार वर्ष अनेक प्रकार के कायाक्लेशों द्वारा बिताये, आगे के चार वर्षो में दूध, दही, घी, गुड़ आदि रसों का त्याग करके शरीर को कृश करता है। इस तरह आठा वर्ष व्यतीत होते है। दो वर्ष तक आचाम्ल व निर्विकृति भोजन ग्रहण करता है। एक वर्ष केवल आचाम्ल भोजन ग्रहण करता है। छह महीने तक मध्यम तपों द्वारा शरीर को क्षीण करता है और अन्त के छह महीनों में उत्कृष्ट तपों द्वारा शरीर को क्षीण करता है।

2- vkgkj R;kx dh ckjg izfrek,¡

यदि आयु व देह की शक्ति अभी बहुत शेष है तो शास्त्रोक्त 12 भिक्षु प्रतिमाओं को ग्रहण करे, जिससे कि क्षपक को पीड़ा न हो–

1. मुनि स्वयं ठहरे हुए देश में उत्कृष्ट और दुर्लभ आहार का व्रत ग्रहण करता है। अर्थात् उत्कृष्ट और दुर्लभ इस प्रकार का आहार यदि एक महीने के भीतर–भीतर मिल गया तो मैं आहार करूंगा अन्यथा नहीं। ऐसी प्रतिज्ञा करके उस महीने के अन्तिम दिन में वह प्रतिमा योग धारण करता है।

2–7 पूर्वोक्त आहार में शतगुणित उत्कृष्ट और दुर्लभ ऐसे भिन्न–भिन्न आहार का व्रत वह क्षपक ग्रहण करता है यह व्रत क्रम से दो, तीन, चार, पांच, छह और सात मास तक के लिए ग्रहण करता है। प्रत्येक अवधि के अन्तिम दिन में प्रतिमायोग धारण करता है। ये कुल मिलाकर सात भिक्षु प्रतिमाएँ हुई।

7–10 पुनः सात–सात दिनों में पूर्व आहार की अपेक्षा से शतगुणित उत्कृष्ट और दुर्लभ ऐसे भिन्न–भिन्न आहार तीन दफा लेने की प्रतिज्ञा करता है। आहार की प्राप्ति होने पर तीन, दो और एक ग्रास लेता है।

11–12 तदनन्तर रात्रि और दिन भर प्रतिमायोग से खड़ा रहकर अनन्तर प्रतिमायोग से ध्यानस्थ रहता है। प्रथम अविधज्ञान और मनः पर्यय ज्ञान की प्राप्ति होती है। अनन्तर सूर्योदय होने पर वह क्षपक केवलज्ञान को प्राप्त कर लेता है। इस रीति से 12 भिक्षु प्रतिमाएं होती है।

3- 'kfDr dh vis{kk rhu vFkok pkj izdkj ds vkgkj dk R;kx

क्षपक के चित्त की एकाग्रता के लिए तीन या चार प्रकार के आहारों का त्याग करना चाहिए। इसमें पानक, अशन, खाद्य और स्वाद्य है। जब क्षपक की शक्ति अतिशय कम होती है तब पानक का भी त्याग करना चाहिए। अर्थात् परीषह सहन करने में खूब समर्थ है उसको चार प्रकार के आहार का और असमर्थ साधु को तीन प्रकार के आहार का त्याग करना चाहिए।

4- vkgkj R;kx dk lkekU; Øe

क्षपक (समाधिमरण की इच्छा रखने वाला) के सम्पूर्ण आहार में से एक–एक आहार को घटाते है। आचार्य क्रम से मिष्टाहार का त्याग कराकर क्षपक को सादे भोजन में स्थिर करते है। तब वह क्षपक भात वगैरह अशन और अनूप वगैरह खाद्य पदार्थों को क्रम से कम करता हुआ पानकाहार करने में अपने को उद्युक्त करता है। संस्तरपर सोया हुआ क्षपक जब क्षीण होगा तब पानक के विकल्प का भी उपरोक्त सूत्रों के अनुसार त्याग करना चाहिए।

{kid dk fy, mi;qDr vkgkj

शरीर सल्लेखना के लिए जो तपों के अनेक विकल्प कहे गये है उनमें आचम्ल भोजन करना उत्कृष्ट विकल्प है, ऐसा महर्षि गण कहते है। दो दिन का उपवास, तीन दिन का उपवास, चार दिन का उपवास, पाँच दिन का उपवास ऐसे उत्कृष्ट उपवास होने के अनन्तर मित और हल्का (आचाम्ल) ऐसा कांजी भोजन ही क्षापक बहुशः करता है। आचाम्ल से कफ क्षय होता है, पित्त का अपशम होता है और वात का रक्षण होता है, अर्थात् वात का प्रकोप नहीं होता । इसलिए आचाम्ल में प्रयत्न करना चाहिए। जो आहार कटुक, तिक्त, आम्ल, कसायला, नमकीन, मधुर, विरस, दुर्गन्ध, अस्वच्छ, उष्ण ओर शीत नहीं है, ऐसा आहार क्षापक को देना चाहिए अर्थात् मध्यम रसों का आहार देना चाहिए। जो पेय पदार्थ क्षीण क्षपक को दिया जाता है, वह कफ को उत्पन्न करने वाला नहीं होना चाहिए और स्वस्थ होना चाहिए। क्षपक को जो देने से पथ्य हितकर होगा ऐसा ही पानक देने योग्य है।

vkgkj fn[kkdj oSjkX; mRiUu djuk &¼Hkxorh vjk/kuk@e-@½

क्षपक को आहार न दिखाकर ही यदि तीन प्रकार के आहारों का त्याग कराया जायेगा तो वह क्षपक किसी आहार विशेष में उत्सुक होगा। इसलिए अच्छे–अच्छे आहार के पदार्थ बरतनों में पृथक परोसकर उस क्षपक के समीप लाकर उसे दिखाना चाहिए। ऐसे उत्कृष्ट आहार को देखकर कोई क्षपक के समीप लाकर उसे दिखाना चाहिए। ऐसे उत्कृष्ट आहार को देखकर कोई क्षपक 'मैं तो अब इस भव के दूसरे किनारे को प्राप्त हुआ हूँ, इन आहारों की अब मुझकों कोई आवश्यकता नहीं है ऐसा मन में समझ कर भोग से विरक्त व संसार से भययुक्त होकर आहार का त्याग कर देता है। कोई उसमें से थोड़ा सा खाकर। कोई सम्पूर्ण का भक्षण करके उपरोक्त प्रकार ही विचारता हुआ उसका त्याग कर देता है। परन्तु कोई क्षपक दिखाया हुआ भक्षण कर उसके स्वादिष्ट रस में लुब्ध होकर उस सम्पूर्ण आहार को बारम्बार भक्षण करने की इच्छा रखता है अथवा उसमें किसी एक पदार्थ को बारम्बार खाने की अभिलाषा रखता है। ऐसा क्षपक कदाचित निर्यापक का उपेदश सुनकर उससे विरक्त होता है और इस पर भी विरक्त न हो तो धीरे–धीरे क्रमपूर्वक उसका प्रत्याख्यान कराया जाता है।

lUnHkZ xzUFk lwph

1 अहो रावण धानुष्को महानसि कुतस्व।
उपदेशो यमायातो गुरोः परमकौशलात्।। पद्म. 10 |127 / 128

2ण पद्म15 |46,47 |

3ण पद्म.11 |15 |

4ण पद्म.15 |93 |

5ण पद्म.8 |18,19 |

6ण वही,17 |364–377 |

7ण वही,11 |184 |

8ण पद्म. 11 |190 |

9ण वेदागमस्य शास्त्रत्वमसिद्धं शास्त्रमुच्यते।
तद्धियन्मातृवच्छास्ति सर्वस्मै जगते हितम्।। पद्म.11 |209 |